अर्जुन उवाच
अथ केन प्रयुक्तोऽयं
पापं चरति पूरुषः ।
अनिच्छन्नपि वार्ष्णेय
बलादिव नियोजितः
॥ ३६॥

अर्जुनः उवाच – अर्जुन ने कहा; अथ – तब; केन –

किस के द्वारा; प्रयुक्तः – प्रेरित; अयम् – यः; पापम् – पाप; चरति – करता है; पुरुषः – व्यक्ति; अनिच्छन् – न चाहते हुए; अपि –

यद्यपि; वार्ष्णेय – हे वृष्णिवंशी; बलात् – बलपूर्वक; इव – मानो; नियोजितः– लगाया गया |

Text

अर्जुन ने कहा – हे वृष्णिवंशी! मनुष्य न चाहते हुए भी पापकर्मों के लिए प्रेरित क्यों होता है? ऐसा लगता है कि उसे बलपूर्वक उनमें लगाया जा रहा हो।

गीता भूषण टीका

श्लोक 34 में भगवान् ने संकेत दिया था की राग जैसे कि दूसरों की पत्नियों से बात करना यह इंद्रियों और मन में दृढ़ता से स्थित रहते हैं । अर्जुन अब इस विषय में एक प्रश्न पूछते हैं ।

वृष्णि वंश में जन्मे कृष्ण! किस वस्तु से प्रेरित होकर, जीव पाप करता है? यद्यपि वह पाप नहीं करना चाहता है और यह जानता है की यह शास्त्र में प्रतिबंधित है तो भी ऐसा लगता है की जबरदस्ती

उसको पाप में नियोजित किया जा रहा हो |

पाप की इच्छा प्रेरित करने वाले के अधीन होने पर निर्भर व्यक्ति में उत्पन्न होती है तो प्रेरित करने वाल कौन है ?

क्या यह भगवान् हैं या जीव के पूर्व संस्कार हैं ?

यह प्रेरक भगवान् तो हो नहीं सकते क्योंकी वे तो कृपालु हैं और साक्षी के रूप में ही रहते हैं और यह संस्कार भी नहीं हो सकते क्योंकि संस्कार तो जड़ माने अचेतन वस्तु होती है|

Purport

जीवात्मा परमेश्वर का अंश होने के कारण मूलतः आध्यात्मिक, शुद्ध एवं समस्त भौतिक कल्मषों से मुक्त रहता है | फलतः स्वभाव से वह भौतिक जगत् के पापों में प्रवृत्त

नहीं होता | किन्तु जब वह माया के संसर्ग में आता है, तो वह बिना झिझक के और कभी-कभी इच्छा के विरुद्ध भी अनेक प्रकार से पापकर्म करता है | अतः कृष्ण से अर्जुन का प्रश्न अत्यन्त प्रत्याशापूर्ण है कि जीवों की प्रकृति विकृत

क्यों हो जाती है | यद्यपि कभी-कभी जीव कोई पाप नहीं करना चाहता, किन्तु उसे ऐसा करने के लिए बाध्य होना पड़ता है | किन्तु ये पापकर्म अन्तर्यामी परमात्मा द्वारा प्रेरित नहीं होते अपितु

अन्य कारण से होते हैं, जैसा कि भगवान् अगले श्लोक में बताते हैं।

श्रीभगवानुवाच
काम एष क्रोध एष
रजोगुणसमुद्भवः ।
महाशनो महापाप्मा
विद्ध्येनमिह वैरिणम्
॥३७॥

श्री-भगवान् उवाच –
श्रीभगवान् ने

कहा; कामः –

विषयवासना; एषः –

यह; क्रोधः –

क्रोध; एषः – यः; रजो-

गुण – रजोगुण

से; समुद्भवः –

उत्पन्न; महा-अशनः –

सर्वभक्षी; महा-पाप्मा – महान पापी; विद्धि – जानो; एनम् – इसे; इह – इस संसार में; वैरिणम्– महान शत्रु |

Text

श्रीभगवान् ने कहा – हे अर्जुन! इसका कारण रजोगुण के सम्पर्क से उत्पन्न काम है, जो बाद में क्रोध का रूप धारण करता है और जो इस संसार का सर्वभक्षी पापी शत्रु है।

गीता भूषण टीका

भगवान् ने कहा , “ इन्द्रिय भोग के विषयों के लिए इच्छा अर्थात काम जो पूर्वगत संस्कारों के कारण होती है वह जीव को पाप करने में प्रवृत कर देती है यद्यपि जीव पाप नहीं करना चाहता है इसलिए काम ही प्रेरक है |”

नोट : इससे पहले की टीका में वासना को पाप के कारण के रूप में निरस्त कर दिया गया था क्योंकि भौतिक पदार्थ का उत्पादन होने के कारण इसमें स्वयं की कोई शक्ति नहीं होती है | फिर भी यहाँ कहा गया है की वासना जब काम के रूप में

परिणत हो जाती है तो वह पाप का कारण बनती है | **इस का अर्थ यह है की वासनाएं स्वयं से कार्य नहीं करती अपीति जीव की इच्छा शक्ति से संयुक्त हो कर ही कार्य कर सकती हैं |**

“परन्तु यह देखा जाता है की क्रोध ,शापादि कार्यों में प्रेरक होता है और ऐसा आपने ३४ श्लोक में कहा है |(राग और द्वेष)”

“यह सत्य है परन्तु यह क्रोध , काम से भिन्न नहीं है | जब यह काम किसी जीव के द्वारा बाधित

होता है तो यह क्रोध बन जाता है जिस प्रकार खट्टी वस्तु के संपर्क में आने से दूध दही के रूप में परिवर्तित हो जाता है |

आप इस काम की व्याख्या कैसे करेंगे ?

यह रजो गुण से उत्पन्न होता है | **इसका अर्थ यह है की सतो गुण की वृद्धि से रजो गुण को जीता जा सकता है और इसके द्वारा काम पर विजय प्राप्त की जा सकती है |**

इस काम को वह देकर जो यह चाहता है उसके द्वारा

शांत नहीं किया जा सकता है अर्थात दान से इस पर विजय प्राप्त नहीं की जा सकती है | यह महान क्षुधा वाला है अर्थात महाशना|

इस सम्बन्ध में स्मृति शास्त्र का कथन है :

यत् पृथिव्यां व्रीहि-यवं हिरण्यं पशवः स्त्रियः

नालम् एकस्य तत् सर्वम् इति मत्वा शमं व्रजेत्

यह समझते हुए की इस पृथ्वी पर उपलब्ध जो भी भोजन ,सोना ,पशु और स्त्री आदि हैं वे एक व्यक्ति के लिए भी पर्याप्त नहीं है

, व्यक्ति को संयत मन से रहना चाहिए |महाभारत 13.94.271

न ही मीठे वचनों के द्वारा इस काम का नियमन किया जा सकता है (साम) और न ही भेद के द्वारा क्योंकि यह बहुत पापी है (महा पापमा). यह बहुत

शक्तिशाली है और व्यक्ति के विवेक को नष्ट करके यह उस व्यक्ति को बलपूर्वक निषिद्ध कार्यों में नियोजित कर देता है इसलिए यह समझो की इसको इस जगत में दान देने के द्वारा भी यह शत्रु ही रहता है |

क्योंकि काम को दान , साम और भेद के द्वारा जीता नहीं जा सकता है इसलिए इसको दंड के द्वारा नष्ट करना चाहिए |

भगवान् सभी कर्मों में निवास करते हैं और सभी कुछ क्रियान्वित करते हैं जैसे वर्षा परन्तु काम जो

जीव से युक्त वासनाओं के द्वारा उत्पन्न होता है वह सीधे ही कर्मों को करने का कारण है और इस कारण से इसे मूर्तिमान पाप कहा जा रहा है (पापमा)

Purport

जब जीवात्मा भौतिक सृष्टि के सम्पर्क में आता है तो उसका शाश्वत कृष्ण-प्रेम रजोगुण की संगति से काम में परिणत हो जाता है | अथवा दुसरे शब्दों में, ईश्वर-प्रेम का भाव काम

में उसी तरह बदल जाता है जिस तरह इमली से संसर्ग से दूध दही में बदल जाता है और जब काम की संतुष्टि नहीं होती तो यह क्रोध में परिणत हो जाता है, क्रोध मोह में और मोह इस संसार में निरन्तर बना रहता है | अतः

जीवात्मा का सबसे बड़ा शत्रु काम है और यः काम ही है जो विशुद्ध आत्मा को इस संसार में फँसे रहने के लिए प्रेरित करता है | क्रोध तमोगुण का प्राकट्य है | ये गुण अपनेआपको क्रोध तथा अन्य रूपों में प्रकट करते हैं | अतः यदि

रहने तथा कार्य करने की विधियों द्वारा रजोगुण को तमोगुण में न गिरने देकर सतोगुण तक ऊपर उठाया जाय तो मनुष्य को क्रोध में पतित होने से आध्यात्मिक आसक्ति के द्वारा बचाया जा सकता है |

अपने नित्य वर्धमान चिदानन्द के लिए भगवान् ने अपने आपको अनेक रूपों में विस्तरित कर लिया और जीवात्माएँ उनके इस चिदानन्द के ही अंश हैं | उनको भी आंशिक स्वतन्त्रता प्राप्त है, किन्तु अपनी इस स्वतन्त्रता का

दुरूपयोग करके जब वे सेवा को इन्द्रियसुख में बदल देती हैं तो वे काम की चपेट में आ जाती हैं | भगवान् ने इस सृष्टि की रचना जीवात्माओं के लिए इन कामपूर्ण रुचियों की पूर्ति हेतु सुविधा प्रदान करने के निमित्त की और

जब जीवात्माएँ दीर्घकाल तक काम-कर्मों में फँसे रहने के कारण पूर्णतया ऊब जाती हैं, तो वे अपना वास्तविक स्वरूप जानने के लिए जिज्ञासा करने लगती हैं |यही जिज्ञासा वेदान्त-सूत्र का प्रारम्भ है जिसमें यः कहा गया है –

अथातो ब्रह्मजिज्ञासा – मनुष्य को परम तत्त्व की जिज्ञासा करनी चाहिए | और इस परम तत्त्व की परिभाषा श्रीमद्भागवत में इस प्रकार दि गई है –

जन्माद्यस्य

यतोऽन्वयादितरतश्च – सारी वस्तुओं का उद्गम

परब्रह्म है | अतः काम का उद्गम भी परब्रह्म से हुआ | अतः यदि काम को भगवत्प्रेम में या कृष्णभावना में परिणत कर दिया जाय, या दुसरे शब्दों में कृष्ण के लिए ही सारी इच्छाएँ हों तो कम तथा क्रोध दोनों ही

आध्यात्मिक बन सकेंगे | भगवान् राम के अनन्य सेवक हनुमान ने रावन की स्वर्णपुरी को जलाकर अपना क्रोध प्रकट किया, किन्तु ऐसा करने से वे भगवान् के सबसे बड़े भक्त बन गये | यहाँ पर भी श्रीकृष्ण अर्जुन को प्रेरित

करते हैं कि वे शत्रुओं पर अपना क्रोध भगवान् को प्रसन्न करने के लिए दिखाए | अतः काम तथा क्रोध कृष्णभावनामृत में प्रयुक्त होने पर हमारे शत्रु न रह कर मित्र बन जाते हैं |